शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 August 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

जीवन की अर्थपूर्णता

डॉ.सिपु जायसवाल
एसोसिएट प्रोफेसर
जानकी देवी मेमोरियल कॉलेज
दिल्ली विश्वविद्यालय
नई दिल्ली, भारत

जीवन का अर्थ, कितना विषयनिष्ठ और कितना वस्तुनिष्ठ है। जीवन और अर्थ अपने-आप में जितना वस्तुनिष्ठ है उतना ही आत्मनिष्ठ भी। क्या हम जीवन के अकाट्य इन दो दृष्टिकोण के लिए कोई निश्चित मापदण्ड तय कर सकते हैं ? यद्यपि इन प्रश्नों का संतोषजनक उत्तर दे पाना कठिन है, परन्तु दार्शनिक विवेचना को इन कठिनाइयों का सामाना करना ही पड़ता है। "दर्शन का कार्य यही है यथा सम्भव समस्या को समझना और उसका संतोषजनक विश्लेषण करना।" व्यक्ति के विचार का विषय चाहे जो भी हो उसका दृष्टिकोण मुख्यतः दो ही तरह का होता है, वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ। कारण सिर्फ "मैं और मेरा जगत से सम्बन्ध" तक ही विचारों का सीमित होना है। विचारों की इस सीमा में ही जीवन की अर्थपूर्णता को खोजना प्रस्तुत शोध पत्र का विषय है, जो मुख्यतः थामस नेगल की पुस्तक "द व्यू फ्रॉम नो व्हेयर" पर आधारित है।

वर्तमान शोध पत्र का उद्देश्य उपर्युक्त प्रश्न पर विषय-निष्ठ और आत्मनिष्ठ इन दो दृष्टिकोणों की अलग-अलग व्याख्या और साथ ही इन दो दृष्टिकोणों को आपस में जोड़ने से उत्पन्न समस्या पर विचार करना है। यद्यपि परम्परा के निर्वाह में अन्ततः निष्कर्ष भी अपेक्षित होगा, परन्तु प्रश्न की व्यापकता की अपेक्षा उत्तर, एक दृष्टि विशेष ही होगा, जो किसी भी तरह के सामान्यीकरण का दावा नहीं करता। प्रारम्भ में 'जीवन की अर्थपूर्णता' के प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों की संक्षिप्त चर्चा करते हुए नेगल के अनुसार वस्तुनिष्ठ तथा आत्मनिष्ठ दृष्टिकोण की संक्षिप्त व्याख्या जीवन और अर्थ के संदर्भ में विषय के अनुसार की गयी है। जो 'जीवन की अर्थपूर्णता' सम्बन्धी उपर्युक्त प्रश्न के उत्तर में तार्किक सम्भावानाओं की ओर निर्देश देगी।

जीवन और जगत साधारण अनुभव में विविधताओं से भरपूर ज्ञात होता है। सांस्कृतिक, सामाजिक, भौगोलिक आदि विषमता के कारण विभिन्न स्थल पर जीवन का मूल्य और अर्थ भिन्न-भिन्न हो सकता है। उदाहरण के तौर पर एक ऋषि, गृहस्थ और भिक्षुक के जीवन के मूल्य सम्बन्धी विचार भिन्नभिन्न हो सकते हैं। ऋषि के लिए जहाँ गीता के द्वारा स्थापित मूल्य जीवन का अर्थ हो सकता है। वहीं गृहस्थ के लिए नैतिकता द्वारा स्थापित मूल्यों की प्राप्ति ही जीवन का अर्थ हो सकता है और भिक्षुक के लिए शायद उसकी अपनी प्राण रक्षा ही जीवन का पहला मूल्य और अर्थ होगा। इस प्रकार स्तर भेद से जीवन में अर्थ भेद होता है। वहीं भौगोलिक, सांस्कृतिक आदि भेद भी हो सकता है। इन भिन्नताओं के कारण जीवन की अर्थपूर्णता के लिए कोई एक निश्चित परिभाषा देना कठिन है, परन्तु जीवन की अर्थपूर्णता को

इन संदर्भों से हटकर दो दृष्टियों से देखा व समझा जा सकता है और यह जानने का प्रयास किया जा सकता है कि जीवन और जगत्, इन दोनों में से कौन जीवन को अर्थ प्रदान करता है।

जीवन[1]

नेगल ने कहा है कि जीवन को दो दृष्टिकोण से देखा जा सकता है, एक वस्तुनिष्ठ दृष्टि से दूसरे आत्मनिष्ठ दृष्टि से। जब हम स्वयं के जीवन के बारे में यह सोचते हैं कि मेरा जीवन महत्वपूर्ण है। मेरा होना, इस जगत् पर मेरा अधिकार है। हम अपने से अलग जगत् की कल्पना नहीं कर सकते। तब हमारी दृष्टि जीवन के प्रति आत्मनिष्ठ दृष्टि होती है। साधारण अनुभव में ऐसा लगता है कि यदि हम नहीं होते तो जगत का अस्तित्व नहीं होता। जीवन से इतना घनिष्ठ सम्बन्ध होता है, कि हम अपने को उससे अलग नहीं देख पाते। यह हमारी आत्मनिष्ठ दृष्टि है। परन्तु जब हम अपने से अलग जगत को इस प्रकार देखते हैं कि हमारे होने या न होने से जगत के अस्तित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। वह हमसे पहले भी था और हमारे बाद भी होगा। जगत् का सम्बन्ध जितना हमसे है उतना ही दूसरों से भी। हमारा सम्बन्ध अगर जगत से टूट भी जाए तो दूसरों का तो सम्बन्ध होगा ही। अर्थात् "जब हम अन्य व्यक्ति से जगत् का सम्बन्ध हमारे अनुभव क्षमता के अनुसार अधिक से अधिक उदाहरणों में देखते हैं, तब यह दृष्टि जीवन के प्रति वस्तुनिष्ठ दृष्टि है।" नेगल ने इसे 'साबुन के उदाहरण' से समझाया है कि विश्व रूपी साबुन के बुलबुले की तरह प्रत्येक व्यक्ति है। व्यक्ति इस दृष्टिकोण से अपने अस्तित्व के बारे में सोचे तो यह वस्तुनिष्ठ दृष्टि है। जब स्वयं को अन्य की भाँति अपने चिन्तन का विषय बनाते हैं, तब यह दृष्टि वस्तुनिष्ठ है। अपने जीवन को विश्व की समस्त घटनाओं के समान एक घटना विशेष की दृष्टि से देखना वस्तुनिष्ठ दृष्टि है। पुनः कुछ व्यक्ति विशेष जिनके होने न होने का फर्क जगत् पर पड़ता है। तो उनका जीवन, हम सामान्य व्यक्ति के जीवन से ज्यादा वस्तुनिष्ठ माना जा सकता है। इस प्रकार विषयनिष्ठता और वस्तुनिष्ठता का एक क्रम दृष्टि विशेष और दृष्टि सामान्य के अनुसार चलता रहता है। व्यक्तिगत रूप से जीवन को देखना अर्थात् सिर्फ स्वयं से जगत् के सम्बन्ध को देखना आत्मनिष्ठता है, तो सम्पूर्ण मानव जीवन और जगत् के सम्बन्ध को उसकी समग्रता और निष्पक्षता से देखना वस्तुनिष्ठता है।

वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण के बारे में दो-तीन मुख्य बातों की ओर नेगल ने संकेत किया है। वह है

(क) वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण में समग्रता न भी हो तो अधिक-से-अधिक उदाहरणों का समावेश होना चाहिए, जो अनुभव के परीक्षण में योगदान दे, अर्थात् विषय जो परीक्षण का विषय बन सके। जैसे भौतिक शास्त्र की वस्तुनिष्ठता। वैसे ही वस्तुनिष्ठ दृष्टि मानवीय संदर्भ में भी है।

(ख) इससे ही सम्बन्धित एक और तथ्य पर प्रकाश पड़ता है और वह है निष्पक्षता। अर्थात् सत्यता और असत्यता आधार न होकर निष्पक्षता ही वस्तुनिष्ठता की कसौटी है।

(ग) वस्तुनिष्ठता में भी मात्रा या डिग्री के अनुसार क्रमशः भेद होता है। उदाहरण के लिए भौतिक विज्ञान से कम मात्रा में नीतिशास्त्र में वस्तुनिष्ठता होती है और नीतिशास्त्र से कम मात्रा में वस्तुनिष्ठता व्यक्तिगत जीवन में होती है। इसी प्रकार विषय विशेष में क्रम के अनुसार वस्तुनिष्ठता की अनन्त श्रृंखला डिग्री भेद के कारण बनती है।

शब्द–ब्रह्म
भारतीय भाषाओं की अंतर्राष्ट्रीय मासिक शोध पत्रिका
E ISSN 2320 – 0871
17 August 2024
पीअर रीव्यूड रेफ्रीड रिसर्च जर्नल

जीवन के संदर्भ में जो मुख्य दो दृष्टिकोण की बात ऊपर की गई है। उसके अनुसार किसी एक दृष्टिमात्र से जीवन को देखने पर दो समस्या उत्पन्न होती है। पहली समस्या अगर हम आत्मनिष्ठ दृष्टि से ही जीवन को देखें तो अन्त में 'अहंमन्यता'[2] की स्थिति होगी। जिसकी विस्तृत विवेचना विट्गेस्टाईन ने की है और नेगल ने भी इसका संकेत दिया है। अहंमन्यता अर्थात् हम स्वयं के बारे में आत्मनिष्ठ दृष्टि से सोचते हुए उस स्थिति में पहुँच सकते हैं जहाँ हम जान तो सकते हैं, परन्तु कह नहीं सकते। यह अकथनीय की स्थिति है। दूसरी समस्या तब होती है, जब हम वस्तुनिष्ठ दृष्टि से जीवन के बारे में सोचते हैं। तब एक ऐसी स्थिति आती है, जब हम मानवीय मूल्यों से बहुत दूर चले जाते हैं और जीवन को जगत् में व्याप्त वस्तुविशेष की भाँति देखने लगते हैं। तब जीवन से जगत् का जो सम्बन्ध है उस सम्बन्ध पर ही हमारा सारा ध्यान केन्द्रित होता है। इस प्रकार जीवन मूल्यों से दूर हम 'स्वभाव शून्यता' पर पहुँच जाते हैं।[3] पुनः एक और मध्य मार्ग की सम्भावना पर दृष्टि जाती है।

जब हम आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ दृष्टियों के बीच तालमेल बैठाने अर्थात् इस दृष्टिकोण को मिलाने की कोशिश करते हैं। इसे एक उदाहरण के द्वारा नेगल ने समझाने की कोशिश की है। "शौचालय में पड़ी मकड़ी रात-दिन मैले व जल के प्रवाह को झेलती हुई अपने जीवन की रक्षा में लिप्त थी। नेगल की अनुभूति में मकड़ी पीड़ित थी। एक दिन नेगल ने उसे शौचालय से बाहर निकाल कर सुखमय व स्वतंत्र जीवन जीने का अवसर दिया। परन्तु अपने पूर्व के दिये गए परिवेश में जीने की आदी मकड़ी सूखे व स्वच्छ स्थल पर आते ही विकलांग सी हो गई।"[4]

यह एक असफल प्रयास था, वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ दृष्टिकोण को मिलने का, क्योंकि इस दृष्टि से मकड़ी को जीने का अभ्यास नहीं था। इसी प्रकार अनेक समस्याएँ इन दो दृष्टिकोण को मिलाने से उत्पन्न होती हैं। हम पहले ही देख चुके हैं कि डिग्री भेद से आत्म और वस्तुनिष्ठ के कई स्तर हो जाते हैं। इनकी असंख्य श्रृंखलाएँ उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार इन्हें जानने की क्रिया की शुरूआत कहाँ से की जाए और कहाँ रोकी जाए। यह दार्शनिक विवेचना के लिए एक उलझन है।

संक्षेप में उपर्युक्त तथ्य को इस प्रकार कह सकते हैं- जो जैसा है, उसे उसी रूप में स्वीकार करना वस्तुनिष्ठता है। जिसमें हम अपनी इच्छा या अनिच्छा से कोई परिवर्तन नहीं कर सकते। जिसके संदर्भ में मेरा व्यक्तिगत अनुभव जो सिर्फ मेरा है, सबसे अलग विशेष प्रकार का है, उसे निष्कर्ष के रूप में उस पर आरोपित नहीं कर सकते। जब तक कि अधिक से अधिक अनुभवकर्ता का, हमारे अपने अनुभव के लिए साक्ष्य न मिल जाए। यही वस्तुनिष्ठता की पहचान है। यंत्रवत् जीवन और जगत् को देखना वस्तुनिष्ठता है। और अपनी इच्छा, अनिच्छा, अपनी सम्भावनाओं, अपनी भावनाओं से, अपने स्वतः मूल्यों से जीवन और जगत को देखना आत्मनिष्ठता अर्थात् अपनी आसक्ति से देखना आत्मनिष्ठता।

मृत्यु के उदाहरण से इसे समझा जा सकता है। मृत्यु एक प्राकृतिक घटना है। इस दृष्टि से यह वस्तुनिष्ठ है। परन्तु मृत्यु का अर्थ जीवन से विच्छेद भी है। इस अर्थ में यह आत्मनिष्ठ है। दूसरों के जीवन और मृत्यु को एक घटना विशेष की भाँति हम अपने निर्णयों का विषय बना सकते हैं। परन्तु अपने आप को जीवन से अलग कर के देखना कठिन है। यह आत्मनिष्ठ दृष्टि है। इन दोनों को मिलाने से विरोधाभास होता है। अगर इन्हें पूर्णतः विरोधाभासी न भी कहें, तो भी इनमें समानता की मात्रा तय करना कठिन है। एक दूसरे की मात्रा कम या ज्यादा हो सकती है। अतः इनके लिए एक निश्चित उदाहरण तैयार करना कठिन है।

अर्थ[5]

उपर्युक्त दृष्टिकोण अर्थ के संदर्भ में भी लागू हो सकती है। जीवन के अर्थ को भी इन्हीं दो परिप्रेक्ष्यों में समझा जा सकता है, जो जीवन के अटल सत्य हैं। जीवन की विविधता और विषमता के कारण जीवन का अर्थ भी विभिन्न होता है। विषमता सामाजिक, ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, भौगोलिक भिन्नता आदि के कारण आती है। प्रत्येक मनुष्य के दैनिक जीवन में उसका अर्थ अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति होती है। आवश्यकताओं की सीमा निर्धारित न होने के कारण दैनिक जीवन के अर्थों का भी निर्धारण सम्भव नहीं है। दैनिक जीवन की इन आवश्यकताओं के स्तर पर अर्थ आत्मनिष्ठ होता है। परन्तु आवश्यकताओं के अतिरिक्त भी जीवन की अपेक्षाएं होती। जो पूर्व निर्धारित परिस्थितियों से उत्पन्न होती हैं जैसे - सुख-दुःख, सफलता-असफलता, खाना-पीना, अच्छा-बुरा आदि के लिए मापदण्ड हमें अपने पूर्व परिवेश से मिलता है। इस प्रकार का अर्थ हमें जन्म के साथ दिया जाता है। इस दृष्टि से अर्थ वस्तुनिष्ठ है।" नेगल के अनुसार "अपने विचारों के खोने और पाने की धारणा के बीच डिग्री का भेद होता है।" हमारा जीवन साधारण और सरल होता है, परन्तु जो उपर्युक्त परिस्थितियाँ हो जाती हैं, उनके आधार पर अच्छे-बुरे, सुख-दुख आदि स्तर व्यक्ति को औरों से अलग कर देते हैं। तब जीवन के लिए निश्चित अर्थ ढूँढ़ना कठिन हो जाता है। पुनः उपर्युक्त वर्णित विषमताओं के कारण जीवन सम्बन्धी ये परिस्थितियाँ भी भिन्न-भिन्न होती हैं। इनका मूल्य भी भिन्न-भिन्न होता है। अतः इनके लिए एक उदाहरण तय करना कठिन है। वस्तुगत दृष्टि से जहाँ जीवन के इन अर्थों को मापना कठिन है। वहीं व्यक्ति के अन्दर के सुख के बारे में यह नहीं कहा जा सकता कौन व्यक्ति सुखी है ? अपने-अपने स्तर से सबका जीवन अर्थपूर्ण हो सकता है और अर्थहीन भी।

वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ दृष्टिकोण को इस स्तर भेद के कारण मिलाया नहीं जा सकता। इसे एक उदाहरण से नेगल ने स्पष्ट किया है। "एक भिक्षुक का जीवन हमारी वस्तुनिष्ठ दृष्टि से अर्थहीन हो सकता। हमारे स्तर से सुख-दुःख की परिभाषा उसके स्तर के सुख-दुःख की परिभाषा से भिन्न है। अपने स्तर से प्राण रक्षा ही उसके जीवन का पहला अर्थ हो सकता है। इस प्रकार वस्तुनिष्ठ दृष्टि से परिस्थिति निर्धारित करती है कि हमारे जीवन का अर्थ क्या है। जो अर्थ पहले से दिया गया है। जिसकी परिभाषाएँ पूर्वमान्य हैं। अच्छा-बुरा, सुख-दुःख आदि उसके आस-पास के परिवेश-जगत् पर निर्भर करता है। संक्षेप में जीवन का मूल्य न तो पूर्णतः स्वयं पर निर्भर करता है और न ही पूर्णतः जगत् पर। जीवन और जगत् का गहरा सम्बन्ध है। जगत् वह आधार है जहाँ जीवन को गति प्राप्त होती है। मानव जीवन कभी भी अपेक्षाओं से रहित नहीं होता है। परिस्थतियों से अपेक्षाओं का सामान्जस्य स्थापित करने में ही जीवन का अर्थ है। जहाँ तक जीवन का आधार यह जगत् है जीवन का अर्थ वस्तुनिष्ठ कहा जा सकता हैं। परन्तु जगत् में गतिशील होने के लिए अपनेअपने स्तर से किया गया प्रयास आत्मनिष्ठ है। जीवन अर्थहीन तब हो जाता है, जब हम सम्भावनाओं के रहते हुए भी हमारी अपेक्षाओं को पूरा नहीं कर पाते। अर्थात् सम्भावनाओं के रहते हुए न किया गया प्रयास अर्थहीनता है।

उपर्युक्त विश्लेषण के बाद एक अहम् तथ्य की ओर नेगल संकेत करते हैं। जीवन और अर्थ की विवेचना जब हम दार्शनिक संदर्भ में करते हैं। अर्थात् जीवन और अर्थ की सम्पूर्ण आत्मनिष्ठ और वस्तुनिष्ठ दृष्टिकोण का विश्व के साथ सम्बन्ध स्थापित करते हुए जीवन के अर्थ के लिए मापदण्ड तय करते हैं।

तब जीवन की अर्थपूर्णता हमें किस दृष्टिकोण से मिलती है आत्मनिष्ठता में या वस्तुनिष्ठता में अर्थात् मानवीय मूल्यों की रक्षा किस दृष्टिकोण से सम्भव है।

यह तय है कि जीवन का मूल्य न तो पूर्णतः स्वयं पर निर्भर करता है और न ही पूर्णतः जगत् पर। जीवन और जगत् का गहरा सम्बन्ध है। क्योंकि जीवन के मूल्यों को जगत् के ही संदर्भ में समझा जा सकता है। जगत् वह आधार है जहाँ जीवन को गति प्राप्त होती है। जैसे मछली को जल में ही गति प्राप्त होती है। गति के बिना जीवन स्थिर है। और जड़ता व स्थिरता किसी को कोई अर्थ प्रदान नहीं कर सकती। प्रवृत्ति ही किसी अर्थ तक मानव को पहुँचा देती है। प्रवृत्ति से तात्पर्य यह है कि मानव जीवन कभी अपेक्षाओं से रहित नहीं होता। इन अपेक्षाओं की अनन्त व अविराम शृंखला होती है। और दी गई परिस्थिति से इन अपेक्षाओं का सामंजस्य स्थापित करते रहना ही प्रवृत्ति है। एक जीवन को उसकी सम्पूर्णता में ही देखने पर यह पता चलता है कि उसकी प्रवृत्ति किस ओर है या थी। और जिस ओर प्रवृत्ति होती है, वही उसका तात्कालिक अर्थ होता है। और जिस ओर प्रवृत्ति थी वही उसका अर्थ था।

जहाँ तक जीवन का आधार यह जगत् है और जगत् द्वारा दी गई गति है, वहाँ तक जीवन की अर्थपूर्णता को वस्तुगत् दृष्टिकोण कहा जा सकता। परन्तु जगत् गतिशील होने के लिए अपने-अपने स्तर से किया गया प्रयत्न व हर सम्भव प्रयास आत्म-निष्ठ है। अपनी शक्ति की सारी सम्भावनाओं के साथ किया गया प्रयास जीवन की अर्थपूर्णता है और शक्ति में सम्भावनाओं के रहते हुए भी न किया गया प्रयास जीवन की अर्थहीनता। जीवन के अर्थ सम्बन्धी उपर्युक्त विवेचनाओं के बाद, उपर्युक्त मत की सार्थकता में विट्गेस्टाइन के उन मतों को देखना अपरिहार्य है, जो उन्होंने अपनी पुस्तक 'कल्चर एण्ड वैल्यू' में जीवन के अर्थ के संदर्भ में लिखा है। सर्वप्रथम वस्तुनिष्ठता और आत्मनिष्ठता को जीवन के संदर्भ से जोड़ते हुए उनकी यह उक्ति सार्थक प्रतीत होती है: "आदर्शवाद मनुष्य को संसार से अलग एक अद्वितीय प्राणी मानता है, अहम्मन्यतावाद केवल अपने आपको अद्वितीय मानता है पर अन्ततः मैं जान जाता हूँ कि मैं भी अन्य लोगों के साथ-साथ संसार का भाग ही हूँ। अतः एक ओर जहाँ कुछ शेष नहीं रहता वहाँ दूसरी ओर संसार अद्वितीय हो जाता है। इस प्रकार वस्तुतः आदर्शवाद हमें वस्तुवाद की ओर ले जाता है।"[6]

यहाँ आदर्शवाद वस्तुनिष्ठ दृष्टि है और अहम्मन्यतावाद आत्मनिष्ठ। अन्ततः मैं भी अन्य लोगों के साथ-साथ संसार का भाग ही हूँ।' यह इस बात की सार्थकता का साक्ष्य है कि व्यक्ति और जगत का घनिष्ठ सम्बन्ध है।

जीवन के उद्देश्य के बारे में क्या जानता हूँ? इस प्रश्न पर विचार करते हुए उन्होंने लिखा -

1 मैं दृष्टिगोचर क्षेत्र में अपनी आँख की भाँति स्थित हूँ। इसमें जो बात समस्यामूलक है उसी को हम जीवन का अर्थ कहते हैं।

2 यह अर्थ इसके भीतर न होकर बाहर है।

3 जीवन ही जगत् है।

4 मेरी इच्छा शक्ति जगत्-भेद की कारक है।

5 मेरी इच्छा शक्ति शुभ-अशुभ हो सकती है।

6 अतः इस जगत् के अर्थ के साथ शुभ या अशुभ किसी न किसी प्रकार जुड़े हुए हैं।

7 जीवन के अर्थ को, यानि जगत् के अर्थ को हम प्रभु के नाम से पुकारते हैं।

8 मैं इच्छानुसार जगत् की घटनाओं को नहीं बदल सकता मैं पूरी तरह शक्तिहीन हूँ।

9 निष्काम भाव से मैं अपने आप को जगत् के प्रभाव से मुक्त करसकता हूँ और इसलिए एक अर्थ में उसका स्वामी बन सकता हूँ।'

पुनः वे कहते हैं "प्रभु पर विश्वास होने का तात्पर्य है, यह समझना कि जीवन का अर्थ होता है। संसार तो मुझे पूर्व प्राप्त है, यानि मेरी इच्छा शक्ति इसमें केवल बाहरी रूप से प्रवेश करती है। मानो पूर्व विद्यमान वस्तु में अपना स्थान बनाती है।"[8]

संक्षेप में हम कह सकते हैं कि विट्गेन्स्टाईन का उपर्युक्त कथन इस बात का संकेत है कि जीवन का अर्थ कई संदर्भों में जगत् पर निर्भर है। हाँ इसमें शुभ या अशुभ हमारी इच्छा शक्ति हो सकती है। इस प्रकार मुख्य रूप से वस्तुनिष्ठ होते हुए भी गौण रूप से अर्थ आत्मनिष्ठ है। पुनः विट्गेन्स्टाईन के अनुसार -

"अनन्त विविधताएँ तो हमारे जीवन के लिए आवश्यक हैं और हमारी स्वाभाविक आदातों के लिए भी। अभिव्यक्ति तो अनिश्चितता में निहित होती है।"[9]

जीवन के अर्थ के सम्बन्ध में कई संदर्भ हमारी विवशता को इंगित करते हैं। जो हमारे लिए पूर्व मान्य हैं, उन्हीं को पाना कई बार जीवन का अर्थ बन जाता है। जो उनकी उक्त पंक्ति से स्पष्ट होता है -

"परम्परा सीखी नहीं जाती, इसकी डोर जब चाहे, पकड़ी नहीं जा सकती; वैसे ही जैसे हम इच्छानुसार अपने पूर्वजों का चुनाव नहीं कर सकते।'[10]

साथ ही उनका यह कथन कि "यह कहने में कोई अतिश्योक्ति नहीं है कि मनुष्य का चरित्र अपने परिवेश से प्रभावित हो सकता है। क्योंकि अनुभव बताता है। इसका अर्थ है कि, मनुष्य परिस्थितियों के साथ परिवर्तित हो जाते हैं।"[11]

निष्कर्ष

दार्शनिक विवेचना में विविधता और विषमता से भरपूर इस जीवन और जगत के संदर्भ में निश्चितता की मांग ही सारी भ्रांति और उलझन का कारण है। जिसे विट्गेन्स्टाइन ने अपनी पुस्तक 'फिलोसिफकल इन्वेस्टिगेशन' में विस्तार से समझाया है। वस्तुतः यह संदर्भ तय करता है कि इस संदर्भ के लिये क्या निश्चित माना जाये। पूर्णतः निश्चित कुछ होता नहीं है। अतः संदर्भानुसार ही हम वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ दृष्टिकोण अपना सकते हैं। उसके निश्चित मापदण्ड तैयार नहीं कर सकते जो सर्वमान्य हो। विट्गेन्स्टाइन के अनुसार दार्शनिक विवेचनाओं में निश्चितता की मांग ही सारी भ्रांति का कारण है।

जीवन और अर्थ की समस्या के समाधान के संदर्भ में विट्गेन्स्टाइन की यह उक्ति इस बात का समर्थन है कि अर्थ की अनिश्चितता ही समस्या का समाधान है। 'दार्शनिक समस्याओं की तुलना हम परीकथाओं के उपहार से कर सकते हैं, मायावी में तो यह मंत्रमुग्ध करने वाला प्रतीत होता है, परन्तु उस महल के बाहर, दिन के उजाले में दखने पर यह एक लोहे के साधारण टुकड़े के सिवाये कुछ भी नहीं होता है।' "भिन्न-भिन्न व्याख्याओं को विभिन्न प्रयोगों के अनुरूप होना चाहिए।"[12]

वस्तुतः आत्मनिष्ठता और वस्तुनिष्ठता दोनों ही जीवन के अटल और अटूट सत्य हैं। जो नदी के दो किनारों की तरह हैं। जिस प्रकार नदी का अस्तित्व इन दो किनारों के बिना नहीं होता। उसी प्रकार जीवन

को समझना, इन दो दृष्टिकोण के बिना सम्भव नहीं। क्योंकि जीवन और जगत् का अटूट सम्बन्ध है। मानो जीवन रूपी नदी के दो किनारे, ये वस्तुनिष्ठ और आत्मनिष्ठ दृष्टि हैं। जिसके बीच नदी की भाँति जीवन प्रवाहित है। यही प्रवाह जीवन की अर्थपूर्णता है। अन्य कई अपेक्षाओं के साथ वस्तुस्थिति का सामञ्जस्य ही जीवन की अर्थपूर्णता है। वैसे ही जैसे नदी मार्ग में आने वाले रुकावटों को अपनी गति से दूर करती हुई प्रवाहित होती रहती है वैसे ही संदर्भानुसार जीवन की अर्थपूर्णता की व्याख्या भी कभी आत्मनिष्ठ दृष्टि तो कभी वस्तुनिष्ठ दृष्टि से होती रहती है। संदर्भ के अनुसार समुचित व्याख्या हो तभी जीवन की अर्थपूर्णता को समझा जा सकता है। अतः जीवन की अर्थपूर्णता के लिए एक निश्चित उदाहरण तय करना, एक 'मिथ्या समस्या' है। जीवन के संदर्भों की समुचित व्याख्या ही इस समस्या का निदान है।

सन्दर्भ सूची

1 द व्यू फ्रॉम नो व्हेयर पृष्ठ 208-209

2 ट्रैक्टेट्स 5.61-5.62

3 द व्यू फ्रॉम नो व्हेयर पृष्ठ 208

4 द व्यू फ्रॉम नो व्हेयर पृष्ठ 208-209

5 द व्यू फ्रॉम नो व्हेयर पृष्ठ 208-209

6 कल्चर एंड वेल्यु, अनुवादकीय - xxi, वोहरा, अशोक, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् दिल्ली

7 कल्चर एंड वेल्यु, अनुवादकीय - xxi, वोहरा, अशोक, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् दिल्ली

8 कल्चर एंड वेल्यु, अनुवादकीय - xxi, वोहरा, अशोक, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् दिल्ली

9 कल्चर एंड वेल्यु, अनुवादकीय - xxi, वोहरा, अशोक, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् दिल्ली

10 कल्चर एंड वेल्यु, पृष्ठ 86, MS 137, 1126, 1948

11 कल्चर एंड वेल्यु, पृष्ठ 95, MS 173, 17r 1950

12 कल्चर एंड वेल्यु, अनुवादकीय - xxi, वोहरा, अशोक, भारतीय दार्शनिक अनुसन्धान परिषद् दिल्ली

संदर्भ ग्रन्थ

1 Nangel, Thomas, The View From No where, Oxford University Press] 1986·

2 विट्गेन्स्टाइन, लुडविग, ट्रैक्टेट्स - लोजिको - फिलोसोफिकस,

3 विट्गेन्स्टाइन, लुडविग, फिलोसोफिक इन्वेस्टिगेशन,

4 विट्गेन्स्टाइन, कल्चर एण्ड वैल्यू, अनुवादक अशोक वोहरा, भारतीय दार्शनिक अनुसंधान परिषद् नई दिल्ली।